भक्तियोग ही श्रेष्ठ है

श्रीलभक्ति दयित माधव गोस्वामी

महाराज जी

[श्रील गुरुदेव ने पंजाब में मायावादियों के दुर्भेद्य दुर्ग में लम्बे समय रहकर विपुल भाव से शुद्ध-भक्ति प्रचार किया। श्रील गुरुदेव जी के अलौकिक व्यक्तितत्व के प्रभाव से पंजाब में मायावाद की मजबूत नींव हिल गयी। इससे सारे पंजाब में भक्ति की एक अद्भुत लहर फैल गयी। बहुत से व्यक्ति मायावादी विचारों को परित्याग करके, शुद्ध-भक्ति सिद्धांत से आकृष्ट होकर, श्रील गुरुदेव जी का

चरणाश्रय ग्रहण करते हुये, गौर विहित-भजन में व्रती हुए। आपकी महापुरुषोचित्त बाहरी आकृति दर्शन करके व आपके माधुर्यपूर्ण व्यवहार से, मायवादी लोग, ये समझते हुए भी कि उनके विचारों का खण्डन हो रहा है, तथापि आपको आमन्त्रण करके आपके श्रीमुख से वीर्यवती हरिकथा श्रवण करके तृप्ति लाभ करते थे।]

पंजाब में मण्डी गोविन्दगढ़ में सन् 1971, 12 सितम्बर से 16 सितम्बर

तक धर्म-महासम्मलेन का आयोजन हुआ। इस सम्मलेन में विभिन्न सम्प्रदायों के आचार्यों ने भी अपने शिष्यों सहित योगदान दिया था। ये आचार्य लोग अधिकतर मायवादी सम्प्रदाय के थे।

श्रील गुरुदेव ने तीन दिन रात्रिकालीन विशेष सभाओं में असंख्य जन समूह में प्रवचन दिये। एक मायावादी ज्ञानी सम्प्रदाय के स्वामी जी ने अपने भाषण में कहा कि

भगवद्-प्राप्ति के दो उपाय हैं— ‘ज्ञानयोग और भक्तियोग’। जो लोग स्त्री-पुत्र आदि विषयों का त्याग करके त्यागी जीवन जीने में समर्थ हैं— उन समर्थ व्यक्तियों के लिए ‘ज्ञानयोग’ उपयोगी है जबकि असमर्थ व्यक्तियों अर्थात् स्त्री-पुत्र आदि विषयों में आसक्त-व्यक्ति, ज्ञानयोग के अधिकारी नहीं हैं। वे लोग तो भक्तियोग के अधिकारी हैं। उदहारण के लिए जैसे एक व्यक्ति के पैर हैं,

वह चलने की शक्ति रखता है एवं दूसरे के पैर नहीं हैं, वह चलने में असमर्थ है। जिसके पैर है, वह चलकर कोई भी वस्तु पकड़ सकता है, परन्तु जिसके पैर नहीं हैं, वह स्वयं वस्तु के पास नहीं जा सकता। उसके पास वस्तु या व्यक्ति को स्वयं आना पड़ता है। घुमा-फिराकर स्वामी जी ने अपने भाषण में भक्ति सम्प्रदाय के साधुओं को लंगड़ा बना दिया।

किन्तु श्रील गुरुदेव जी ने

ऊपर कहे गये अपसिद्धान्त का अपने भाषण में शास्त्र प्रमाण एवं युक्तियों से खण्डन कर दिया। उन्होंने कहा कि भगवान् अस्मोध्..र्व, असीम एवं पूर्ण हैं। उन्हें छोड़कर उनकी प्राप्ति का और कोई उपाय नहीं हो सकता। यदि भगवान् को छोड़कर भी भगवान् की प्राप्ति का कोई उपाय स्वीकार किया जाये तो वह उपाय या तो भगवान् के समान या फिर भगवान् से बड़ा होगा—

'न तस्य कार्यं करणञ्च? विद्यते न तत्समश्चाभ्यधिकश्च दृश्यते।
परास्य शक्ति विर्विधैव श्रूयते स्वाभाविकी ज्ञान-बल-क्रिया च।।' (श्वेताश्वतर उपनिषद 6/8)

अर्थात् उन परब्रह्म परमात्मा की कोई भी क्रिया प्राकृत नहीं होती, क्योंकि उनका कोई भी करण-हस्त पादादि इन्द्रियाँ प्राकृत नहीं होतीं। वे अप्राकृत शरीर से एक ही समय सब जगह विराजमान रहते हैं। इसलिये उनसे बड़ा तो दूर रहे, उनके समान भी कोई दूसरा नहीं दीखता। उन परमेश्वर की

अलौकिकी शक्ति नाना प्रकार की सुनी जाती है, जिनमें ज्ञानशक्ति, बलशक्ति और क्रियाशक्ति – ये तीन प्रधान हैं। इन तीनों को कर्मशः चित्-शक्ति या सम्वित्-शक्ति, सत्-शक्ति या सन्धिनी-शक्ति और आनन्द-शक्ति या ह्लादिनी-शक्ति भी कहते हैं।

भगवान् ही भगवान् की प्राप्ति का उपाय हैं अर्थात् भगवत् इच्छा ही भगवद्-प्राप्ति का उपाय है। भगवान् की इच्छा का अनुवर्तन ही प्रीति

कहलाती है; उसे ही भक्ति कहते हैं। इसलिये एकमात्र भक्ति द्वारा ही भगवान् को पाया जाता है और कोई उपाय नहीं है। प्रमाण:-

'भक्त्याहमेकाय ग्राह्यः श्रद्धयात्मा प्रियः सताम्।
भक्तिः पुनाति मन्निष्ठा श्वपाकानपि सम्भवात्।।
(श्रीमद्भा. 11/14/21)

मैं साधुजनों का प्रिय हूँ। अनन्य होने पर ही मुझे प्राप्त किया जा सकता है। मेरे प्रति निष्ठापूर्वक की गयी भक्ति चाण्डालों को भी जातिदोष से पवित्र कर देती है।

भक्ति साथ में मिश्रित हो, तभी कर्म, ज्ञान एवं योग अपना-अपना फल प्रदान कर सकते हैं। किन्तु भक्ति रहित होने पर ये सब फल देने में असमर्थ हैं। जहाँ पर भागवत और वेद के वाक्यों का आनुगत्य है, वहीँ पर कर्म का फल- इस लोक और उस लोक में इन्द्रिय सुख की प्राप्ति, ज्ञान का फल- मुक्ति या ब्रह्मसायुज्य की प्राप्ति और योग का फल—सिद्धि या ईश्वर-सायुज्य आदि की प्राप्ति हो

सकती है।

‘कृष्णभक्ति हय अभिधेय-प्रधान।
भक्तिमुख-निरीक्षक कर्म-योग-ज्ञान।।
एइ सब साधनेर अति तुच्छ बल।
कृष्णभक्ति बिना ताहा दिते नारे फल।।’
(चै.च.म. 22/17-18)

अर्थात् कृष्णभक्ति प्रधान अभिधेय है। कर्म, योग, ज्ञान आदि फल प्रदान करने में भक्ति की अपेक्षा रखते हैं। वे स्वतन्त्र रूप से फल देने में असमर्थ हैं। किन्तु वे अर्थात् कर्म व ज्ञान भगवान् को या भगवान् के प्रेम को प्राप्त नहीं करा सकते। केवल मात्र

निष्काम शुद्धभक्ति के द्‌वारा ही भगवान् या भगवत्-प्रेम प्राप्त होता है।

इसलिए भक्ति रहित सभी व्यक्ति ही लंगड़े हैं। प्रेम के द्‌वारा ही प्रेम की वृद्धि होती है, और किसी साधन से नहीं। भक्ति ही साधन और भक्ति ही साध्य है, जो भगवान् को नहीं चाहते, और-और वस्तुएँ चाहते हैं, वे भगवान् को कैसे प्राप्त कर सकते हैं? शुद्ध-भक्त एकमात्र भगवान् को ही चाहते

हैं, अन्य वस्तुओं के लिए आकाँक्षा उनके मन में नहीं होती, इसलिए वे ही भगवान् को प्राप्त करते हैं। मायावादियों के विचार में शुद्ध-भक्ति नित्य नहीं है, जबकि शुद्ध-भक्ति में–-भगवान् नित्य है, भक्त नित्य है और भक्ति नित्य है। जहाँ पर भगवान् के स्वरुप को नही मानते हैं, बल्कि ऐसी धारणा करते हैं कि स्वरुप मानने से तो वह मायिक हो जाएगा, वहाँ पर भक्ति हो ही नहीं सकती'—

'प्राकृत करिया माने विष्णु-कलेवर।
विष्णु निन्दा आर नाहि इहार उपर।।' (चै.च.आ. 7/115)

अर्थात् विष्णु के शरीर को प्राकृत मानना, विष्णु भगवान की सबसे बड़ी निंदा है।

जहाँ पर भगवान् के नित्य चिन्मय स्वरूप को स्वीकार किया जाता है, वहीं भगवान् की कृपा से कर्म, ज्ञान एवं योग साधना का फल प्राप्त होता है और जहाँ भगवान् के स्वरुप का अस्तित्व नित्य नहीं माना जाता, वहाँ

किसी भी फल की प्राप्ति नहीं होती।

मायावाद: मायावादियों के मतानुसार श्रीकृष्ण के नाम, रूप, गुण व लीला आदि सभी झूठे तथा नाशवान हैं। इनके मतानुसार भगवद्-प्रेम-तत्त्व नित्य नहीं होता, इसीलिए यह मायवादी-मत शत-प्रतिशत भक्ति मार्ग के विपरीत है। भक्ति के शत्रु के रूप में मायावाद की गणना होती है, इसीलिए मायवादी भगवद्-चरणों में अपराधी होते हैं।

किसी भी फल की प्राप्ति नहीं होती।

मायावाद: मायावादियों के मतानुसार श्रीकृष्ण के नाम, रूप, गुण व लीला आदि सभी झूठे तथा नाशवान हैं। इनके मतानुसार भगवद्-प्रेम-तत्त्व नित्य नहीं होता, इसीलिए यह मायवादी-मत शत-प्रतिशत भक्ति मार्ग के विपरीत है। भक्ति के शत्रु के रूप में मायावाद की गणना होती है, इसीलिए मायवादी भगवद्-चरणों में अपराधी होते हैं।

श्रीकृष्ण और श्रीकृष्ण नाम में भेद करना ही मायावाद दोष है।

भक्तियोग: वर्णाश्रमधर्म में अवस्थित रहकर जीवन-यात्रा का निर्वाह करते हुए श्रीकृष्ण के चरणकमलों में चित्त लगाने के लिए वैधभक्त सदैव यत्न करेंगे। इसी को भक्तियोग कहते हैं।

ज्ञानयोग:

{"अर्च्ये विष्णौ शिलाधी-र्गुरुषु नरमतिर्वैष्णवे जातिबुद्धि-विष्णुर्वा वैष्णवानां कलिमलमथने पादतीर्थेऽम्बु बुद्धिः।।

श्रीविष्णोनाम्नि? मन्त्रे सकल कलुषहे शब्द सामान्यबुद्धि-
विष्णो सर्वेश्वरेशे तदितरसमधीर्यस्य वा नारकी सः।।”

श्री पद्म पुराण में कहते हैं कि जो लोग विष्णु जी के अर्चा विग्रह को पत्थर समझते हैं, गुरुदेव जी को साधारण मनुष्य मानते हैं, वैष्णवों में जाति बुद्धि करते हैं, कलि के पापों को नाश करने वाले विष्णु और वैष्णवों के चरणामृत को साधारण पानी मानते हैं, समस्त पापों को नाश करने वाले

श्रीविष्णु जी नाम-मन्त्र को साधारण शब्द मानते हैं तथा भगवान् विष्णु जी को अन्यान्य देवताओं के समान समझते हैं-वे सभी नारकीय हैं अर्थात् महापापी हैं।}

श्रीलपरमगुरुदेव